भारत में शिक्षा एवं चुनौतियाँ

डॉ0 ध्रुव भूषण सिंह*

प्राथमिक विद्यालयों में मूलभूत सुविधाओं का अभाव है। हाईस्कूल तक ड्राप आउट दर 50 प्रतिशत से ज्यादा है। आधे से ज्यादा विद्यालयों में लड़कियों के लिये टायलेट की सुविधा नहीं है। गुणवत्ता का हाल यह है कि पांचवीं कक्षा के आधे से अधिक बच्चे दूसरी कक्षा के पाठ्यपुस्तकों को ठीक से पढ़ नहीं पाते। उच्च शिक्षा में स्थिति यह है कि विश्व 400 विश्वविद्यालयों कि रैंकिंग में भारत का एक भी विश्वविद्यालय नहीं है। विश्वविद्यालय एवं महाविद्यालयों का मूल्यांकन करने वाली संस्था नैक (NAAC) के अनुसार भारत के 68 प्रतिशत विश्वविद्यालय 90 प्रतिशत महाविद्यालय मध्यम या खराब स्तर के हैं। शिक्षा की इस चुनौती से निबटने के लिये मात्र आधारभूत संरचना एवं आधुनिक संस्थानों के निर्माण मात्र से ही नहीं बल्कि कैरीकुलम एवं पाठ्यक्रम को परिस्थिति, आवश्यकता तथा माँग के अनुरुप बनाना होगा साथ ही परम्परागत सोच से बाहर आना होगा।

शिक्षा व्यक्ति के व्यक्तित्व के सर्वांगीण विकास के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण है। शिक्षा व्यक्ति में ज्ञान का संचार करती है। यह व्यक्ति में आत्मनिर्भरता, स्वायत्तता और अधिकार–सम्पन्नता की भावना विकसित करती है। इससे व्यक्ति सामाजिक सरोकार पारस्परिक सद्भाव और सहनशीलता जैसे गुण प्राप्त कर जीवन मूल्य और शालीनता अपनाने में सफल होता है। शिक्षा से ही मानव की संपूर्ण प्रदत्त प्रतिभा, योग्यता एवं संभावनाओं का विकास सम्भव है।

प्रख्यात समाजशास्त्री इमाइल दुर्खीम के अनुसार शिक्षा का उद्देश्य परम्परा, संस्कृति, शिल्प और ज्ञान को एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी तक पहुँचाना है। यह समाज में कई कार्यों को निष्पादित करता है। यह समाजीकरण, ज्ञान एवं सूचना का संप्रेषण, चरित्र निर्माण एवं व्यक्तित्व विकास, मानव संसाधन का विकास, सामाजिक एवं आर्थिक विकास में योगदान तथा सामाजिक नियंत्रण इत्यादि बहुआयामी सीख का आधार है।

भारतीय[1] मनीषियों ने कहा है, सा विद्या या शक्ति। अर्थात् जो हमें अनुशासित करती है, वह विद्या है। वे कहते हैं, सा विद्या या विमुक्तये। यानि, वही विद्या है जो हमें मुक्ति देती है। गुरुग्रंथसाहिब में भी वर्णित है, विद्या विचारी तां परोपकारी। कुरानशरीफ का पहला वाक्य है, इकरा, पढ़ो। अल्लाहताला का फरमान है कि तालीम हासिल करो, इल्म विकसित करो। ''उतलिवुल इल्म वलौ काना बिस्सीन'', यानि इल्म के लिए बहुत दूर ही क्यों न जाना पड़े जाना चाहिए। परिस्थितियों को समझने–बुझने, उनका विश्लेषण करने और उनसे निजात पाने की कला का नाम शिक्षा है ।

21वीं सदी[2] का समाज ज्ञान का समाज होगा। आज मानव जाति शिक्षा को एक अपरिहार्य संपदा के रूप में देख रही है। यद्यपि स्वतन्त्रता के पश्चात् शिक्षा के क्षेत्र में सुधार आया है। स्वतन्त्रता के समय 12 प्रतिशत लोग शिक्षित थे। वर्तमान में 2011 की जनगणना के अनुसार, 74.04 प्रतिशत है, जिसमें 82.14 प्रतिशत पुरुष तथा 65.46 प्रतिशत स्त्रियाँ शिक्षित हैं। भारतीय संविधान में शिक्षा के लिए कई प्रावधान हैं। अनुच्छेद 45 में कहा गया है कि राज्य 14 वर्ष तक की उम्र के सभी बच्चों को निःशुल्क

* **असिस्टेंट प्रोफेसर, समाजशास्त्र, शहीद हीरा सिंह राजकीय महाविद्यालय, धानापुर, चन्दौली**

और अनिवार्य शिक्षा प्रदान करने का प्रयास करेगी। 42वें संविधान संशोधन द्वारा शिक्षा को समवर्ती सूची में स्थान दिया गया है। परन्तु अभी भी शहर एवं गाँव के मध्य साक्षरता दर में काफी बड़ा 22 प्रतिशत का अन्तर बना हुआ है। दलित, वंचित, पिछड़े समुदाय के बहुत बड़े हिस्से तक शिक्षा की पहुँच नहीं बन पायी है। 65 प्रतिशत आदिवासी और 54 प्रतिशत दलित अब भी निरक्षरता के अन्धकार में जीने को अभिशप्त हैं। यही दशा शहर एवं ग्रामीण महिलाओं के बीच है।

यदि प्राथमिक शिक्षा पर गौर करें तो स्वतन्त्रता के पश्चात् प्राथमिक शिक्षा[3] में छात्र/छात्राओं के पंजीकरण में सार्थक वृद्धि हुई है परन्तु ड्राप आउट दर एवं सीखने का स्तर राज्य तथा केन्द्रीय सरकार के लिये एक चुनौती बनी हुयी है। 29 प्रतिशत बच्चे प्राइमरी स्तर तक ही स्कूल छोड़ देते हैं, जबकि मिडिल स्तर तक 43 प्रतिशत, हाईस्कूल में 58 प्रतिशत है। प्राथमिक विद्यालयों में मूलभूत सुविधाओं का अभाव है। मात्र 53 प्रतिशत विद्यालयों में लड़कियों के लिए शौचालय हैं तथा लगभग 74 प्रतिशत स्कूलों में पीने का पानी उपलब्ध है। 689000 अध्यापकों की कमी है। शिक्षा के वार्षिक प्रस्थिति पर 'प्रथम' संस्था के रिपोर्ट 2013 के अनुसार तीसरी कक्षा के 78 प्रतिशत, पाँचवीं कक्षा के 50 प्रतिशत बच्चे दूसरी कक्षा के पाठ्य–पुस्तकों को ठीक से नहीं पढ़ सकते हैं। पाँचवीं कक्षा के 26 प्रतिशत बच्चे ही गणित के भाग के सवाल को हल कर पाते हैं। इस[4] समय देश में औसतन 70 प्रतिशत स्कूल सरकारी हैं तथा 28–30 प्रतिशत प्राइवेट हैं जो पब्लिक स्कूलों के नाम से जाने जाते हैं।

मध्यवर्ग[5] सार्वजनिक तन्त्र का तब हिस्सा बनता है जब उससे बचना मुश्किल होता है। सार्वजनिक यानि सरकारी तन्त्र से बचने की अच्छी–खासी वजहें भी हैं। सबसे आसान तर्क तो यही है कि यह तन्त्र काम नहीं करता। लेकिन यह सोच सभ्य समाज व लोकतन्त्र के लिए घातक है। प्रभावशाली एवं रईस लोग न सिर्फ सरकारी तन्त्र का त्याग कर रहे हैं, बल्कि इसके विचार को भी खत्म कर रहे हैं। यही सोच सभ्य समाज की नींव को खोखला करती है जो यह समझते हैं कि बाजार सभी उत्पाद और सेवाएँ मुहैया नहीं करा सकता, वे भी सार्वजनिक व्यवस्था में सुधार को जरूरी नहीं मानते। जिन देशों में सरकारी तन्त्र नाकाम हुए हैं वहीं बड़ी तादाद में निजी शिक्षण संस्थाएँ हैं। सारे सिद्धान्त अनुभव व सबूत यही संकेत करते हैं कि बेहतर सरकारी स्कूल ही गुणवत्तायुक्त शिक्षा का जरिया हैं। यह मिथक टूटा है कि सरकारी स्कूलों से बेहतर प्राइवेट स्कूलों का प्रदर्शन होता है। विदेशी अनुभव यही बयां करते हैं। मशहूर शिक्षाविद् डायने रैविट्च की किताब 'रेन आफ एरर' में स्कूली शिक्षा के हालात पर चर्चा है। इसमें यह उजागर है कि अमेरिका जैसे देश में इसका बुरा प्रभाव है। दो दशक के निजीकरण के बाद स्वीडन के स्कूली शिक्षा प्रणाली के नतीजे बदतर ही हुए हैं और गैर बराबरी बढ़ी है।

प्रोग्राम फॉर इंटरनेशनल स्टूडेंट्स एसेसमेंट[6] (पीसा) पर नजर डालने से स्पष्ट है कि बेहतर सामाजिक–आर्थिक स्थिति के बाद भी पब्लिक स्कूलों में उम्दा प्रदर्शन प्राइवेट स्कूलों के नहीं हैं। प्राइवेट स्कूलों की व्यापकता या स्कूलों के उच्च स्तर की प्रतिस्पर्धा से स्कूल प्रणाली का भला होता नहीं दिखता। 65 देशों के तुलनात्मक अध्ययन भी बताते हैं कि प्रतिस्पर्धा और बाजार आधरित तन्त्रों से स्कूली प्रणाली नहीं सुधरती। जब समाज में संचालन, निर्धारण क्रियान्वयन वर्ग–विशेष के हाथ में सिमट जाता है तब ऐसी धारणा स्पष्ट होती है कि अन्य की चिंता क्यों करें। ऐसा तभी सम्भव था जब स्वतन्त्रता के पश्चात् बनी हर सरकार गांधी के उस 'जंतर' को याद रखती कि किसी भी नये प्रारूप को स्वीकार करने से पहले यह याद करो कि पंक्ति के अंतिम छोर पर बैठे व्यक्ति को उससे क्या लाभ मिलेगा, उनकी ऐसी अपेक्षा सरकारों से ही नहीं व्यक्तियों से भी थी।

उच्च शिक्षा के सन्दर्भ में भी भारत की स्थिति कई स्तरों पर चिंताजनक है। उच्च शिक्षा तक पंजीकरण, गुणवत्ता, मूलभूत सुविधा का अभाव, शोध इत्यादि समस्याओं से ग्रस्त हैं। विश्वविद्यालय तथा उससे सम्बद्ध महाविद्यालय उच्च शिक्षा की मुख्य संस्थाएँ हैं। वर्तमान[7] में 227 सरकारी विश्वविद्यालय हैं। इसमें ओपेन विश्वविद्यालय, बाकी राज्य विश्वविद्यालय हैं। भारत सरकार के उच्च शिक्षा विभाग के अनुसार 16885 कॉलेज हैं, जिसमें 1800 महिला महाविद्यालय हैं। करीब 4.57 लाख शिक्षक एवं 99.54 लाख विद्यार्थी इन संस्थाओं में शिक्षा ग्रहण करते हैं। विश्वविद्यालय अनुदान आयोग (UGC) के अनुसार 1500 और विश्वविद्यालयों की आवश्यकता है जिससे वैश्विक बाजार से मुकाबला किया जा सके।

वैश्विक आँकड़ों पर नजर डालें तो स्पष्ट होता है कि उच्च शिक्षा में पंजीकृत छात्रों की दर अन्य देशों के मुकाबले भारत में काफी कम, मात्र 11 प्रतिशत है जबकि चीन में 20 प्रतिशत, अमेरिका में 83 प्रतिशत तथा दक्षिण कोरिया में 91 प्रतिशत है। यदि उच्च शिक्ष में यह दर भारत में 15 प्रतिशत तक ले जाना है तो इसके लिए 226410 करोड़ रुपये की आवश्यकता होगी। जबकि 11वीं पंचवर्षीय योजना में 7793 करोड़ रुपये का प्रावधान किया गया। भारतीय विश्वविद्यालयों एवं महाविद्यालयों का मूल्यांकन करने वाली संस्था नैक (NAAC) के अनुसार भारत के 68 प्रतिशत विश्वविद्यालय तथा 90 प्रतिशत महाविद्यालय मध्यम या खराब स्तर के हैं। Quacqarelli Symonds (QS) द्वारा जारी रिपोर्ट 2015 के अनुसार विश्वविद्यालय विश्व रैंकिंग में मात्र 14 संस्थान हैं जिसमें 400 की रैंकिंग में कुल 7 संस्थान हैं। गौरतलब है इसमें भारत का एक भी विश्वविद्यालय नहीं है। दिल्ली विश्वविद्यालय का विश्व रैंकिंग में 481 स्थान है। 400 में जो सात संस्थान हैं वह सभी भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान हैं। जबकि 200 रैंकिंग में 34 देशों के विश्वविद्यालय अपना स्थान बनाये हुए हैं। अमेरिका के 49, ब्रिटेन के 30, नीदरलैण्ड के 12, जर्मनी के 11, कनाडा, आस्ट्रेलिया तथा जापान के 08, चीन के 07 तथा फ्रांस, स्वीडेन एवं हांग कांग के 05 विश्वविद्यालय या संस्थान अपना स्थान 200 की रैंकिंग में बनाये हुए हैं। जबकि Massachusetts Institute of Technology प्रथम, हावर्ड द्वितीय तथा स्टेनफोर्ड विश्वविद्यालय तृतीय स्थान पर है। केवल लन्दन शहर में 04 विश्वविद्यालय विश्व रैंकिंग 50 में अपना स्थान रखते हैं।

हाल[9] ही में नैसकाम और मैकिन्से के शोध के अनुसार मानविकी में 10 में से एक और इंजीनियरिंग में डिग्री ले चुके चार में से एक भारतीय छात्र ही नौकरी पाने योग्य है। भारतीय विश्वविद्यालय औसतन हर पाँचवें से दसवें वर्ष में अपना पाठ्यक्रम बदलते हैं लेकिन तब भी ये मूल उद्देश्य को पूरा करने में असफल रहते हैं। अच्छे शिक्षण संस्थानों की कमी की वजह से अच्छे कॉलेजों में प्रवेश पाने के लिए कट ऑफ प्रतिशत असामान्य हद तक बढ़ जाता है। श्रीराम कॉलेज ऑफ कामर्स (दिल्ली विश्वविद्यालय से सम्बद्ध) में 99 प्रतिशत तक प्रवेश सम्भव हो पाता है। अध्ययन बताते हैं कि सेकेण्ड्री स्कूल में अच्छे अंक लाने के दबाव के कारण छात्रों में आत्महत्या की प्रवृत्ति बहुत तेजी से बढ़ रही है। भारतीय छात्र विदेशी विश्वविद्यालय में पढ़ने के लिए हर साल सात अरब डालर यानि करीब 43 हजार करोड़ रुपये खर्च करते हैं क्योंकि भारतीय विश्वविद्यालय में पढ़ाई का स्तर घटिया है।

Quacqarelli Symonds (QS)[8] द्वारा जारी रिपोर्ट 2015 के अनुसार विश्वविद्यालय विश्व रैंकिंग

15 साल[10] पहले मैनेजमेंट गुरु पीटर ड्रकर ने ऐलान किया था, ''आने वाले दिनों में ज्ञान का समाज दुनिया के किसी भी समाज से ज्यादा प्रतिस्पर्धात्मक समाज बन जायेगा। दुनिया में गरीब देश शायद समाप्त हो जाएं लेकिन किसी देश की समृद्धि का स्तर इस बात से आंका जायेगा कि वहाँ की शिक्षा का स्तर किस तरह का है।'' इंफोसिस के प्रमुख नारायण मूर्ति ध्यान दिलाते हैं कि अपनी शिक्षा प्रणाली की बदौलत ही अमेरिका ने सेमी कंडक्टर, सूचना तकनीक और बायोटेक्नालॉजी के क्षेत्र में इतनी तरक्की की है। इन सबके पीछे वहाँ के विश्वविद्यालयों में किए गये शोध का बहुत बड़ा हाथ है। दुनिया भर में विज्ञान और इंजीनियरिंग के क्षेत्र में हुए शोध में से एक तिहाई अमेरिका में होते हैं। इसके विपरीत भारत में सिर्फ 3 प्रतिशत शोध–पत्र प्रकाशित हो पाते हैं। भारतीय विशिष्ट पहचान प्राधिकरण के प्रमुख नंदन नीलेकर्णी कहते हैं कि भारत को अपने डेमोग्राफिक लाभांश का फायदा उठाना चाहिए। इस समय भारत की लगभग आधी आबादी 25 साल से कम उम्र की है। इनमें 12 करोड़ लोगों की उम्र 18–23 वर्ष के बीच है। इन्हें यदि ज्ञान एवं हुनर से लैस कर दिया जाय तो ये अपने बूते पर भारत को एक वैश्विक शक्ति बना सकते हैं।

इस प्रकार कुल मिलाकर शिक्षा की स्थिति ऐसी है कि भारत वैश्विक गुणवत्ता मानक के अनुरूप नहीं है। परम्परागत रूप से यह सोच विकसित हो चुकी है कि अच्छी एवं उच्च डिग्री प्राप्त शिक्षकों, अच्छी किताबों एवं जर्नल्स से भरपूर लाइब्रेरी, आधुनिक रूप से विकसित कॉलेज या विश्वविद्यालय परिसर अत्यधिक निवेश इत्यादि से गुणवत्तापूर्ण वातावरण बनाया जा सकता है। विभिन्न सरकारी समितियों एवं शिक्षाविदों ने अपने रिपोर्ट या विचारों से स्पष्ट किया है कि उपरोक्त के बावजूद शैक्षणिक व्यवस्थागत खामियां उजागर हैं जैसे– शैक्षणिक बेरोजगारी में वृद्धि, छात्रों में उत्साह की कमी, परिसर में अशांति, प्रशासनिक विफलता एवं अनुशासनहीनता, मानकों में गिरावट इत्यादि समस्यायें बनी हुयी हैं। जबकि सबसे महत्वपूर्ण यह है कि अप्रासंगिक एवं उद्देश्यविहीन शिक्षा प्राप्त करने जैसी स्थिति स्पष्ट है।

गौरतलब है कि शिक्षा किसी समाज के लिए वृहद् लक्ष्यों एवं मूल्यों को समेटे हुए होना चाहिये। इस रूप में भारत शिक्षा के संदर्भ में अपने वृहद् लक्ष्यों से भटक गया है। यह स्थिति शिक्षा के लिए चुनौती है। शिक्षा के वास्तविक दूरगामी लक्ष्यों की प्राप्ति हेतु इस संदर्भ में व्यापक कदम उठाने की आवश्यकता है।

विशेषज्ञों की राय है कि 'रन ऑफ द मिल' यानि बने बनाये ढर्रे पर स्नातक पैदा करने की प्रवृत्ति से जितनी जल्दी छुटकारा पाया जाए उतना ही अच्छा है। आजकल सबसे प्रचलित जुमला है नौकरी से जुड़े कोर्स। फैसला लेने वालों के बीच वोकेशन शिक्ष या दूरवर्ती शिक्षा का भी रुतबा अब नहीं रहा क्योंकि इसके साथ ये बट्टा लगा हुआ है कि ये पढ़ाई में पीछे रहने वालों की पसंद हैं। एन0आई0आई0टी0 के संस्थापक राजेन्द्र सिंह पवार कहते हैं, ''अब उस जाति व्यवस्था से छुटकारा पाने की जरूरत है जिसने एक ऐसी शिक्षा व्यवस्था को जन्म दिया है जहाँ अगर कोई व्यवसायिक शिक्षा लेने के लिए ट्रेन से उतरता है तो उसे बाद में उच्च शिक्षा के डिब्बे में सवार होने की अनुमति नहीं होती। 21वीं सदी में उच्च शिक्षा को तब तक स्तरीय नहीं बनाया जा सकता जब तक भारत की स्कूली शिक्षा 19वीं सदी में विचरण कर रही हो। वैसे तो स्कूली शिक्षा की मूलभूत सुविधाओं में पिछले दशक में काफी वृद्धि हुई है लेकिन पब्लिक रिपोर्ट आन बेसिक एजुकेशन (प्रोब) के सदस्य ए0के0 शिवकुमार का मानना है कि मुख्य समस्या गुणवत्ता की है। यह भी एक कड़वा सच है कि आधे से अधिक प्राथमिक विद्यालयों में कोई भी शैक्षणिक गतिविधि नहीं होती। अब समय आ गया है कि प्राथमिक शिक्षा की संरचनात्मक एवं मूलभूत सुविधाओं को ठीक किया जाय। गुणवत्ता सुधारने पर विशेष जोर दिया जाय। यह किये बिना उच्च शिक्षा में गुणात्मक सुधार सम्भव नहीं है।

उच्च शिक्षा के सम्बन्ध में व्यापक सुधार की आवश्यकता है। सबसे महत्वपूर्ण रूप से विचारणीय है कि किस भाषा में शिक्षा दी जाय? इसका चुनाव ऐसा हो कि यह क्षेत्रीय, राष्ट्रीय तथा वैश्विक स्तर पर बाधा न बने। कैरिकुलम या पाठ्यक्रम को निर्माण भारतीय सांस्कृतिक एवं भौगोलिक पृष्ठभूमि को भी ध्यान रखते हुए बनाया जाय। इसमें प्राथमिक स्तर से ही पर्यावरण, मूल्य, संस्कृति, व्यक्तित्व निर्माण एवं सामूहिक चेतना जैसे विषय पाठ्यक्रम में रखा जाय जिससे एक जिम्मेदार नागरिक बनने की प्रक्रिया प्रारम्भ से बच्चों में घर कर जाय। उच्चशिक्षा में शोध प्रक्रिया हेतु संसाधनों में वृद्धि की जाय, शिक्षकों एवं विद्यार्थियों को इस प्रक्रिया को संजीदगी से करने पर पुरस्कार या प्रोत्साहन दिया जा सकता है। शोध प्रक्रिया को व्यापक एवं सरल बनाया जाय। यह केवल कुछ संस्थानों की कृपा पर केन्द्रित न रहे। ग्रामीण महाविद्यालयों में विशेष सुविधायें शिक्षकों एवं छात्रों को उपलब्ध कराया जाय जिससे उनकी गुणवत्ता में सुधार हो और कुछ गिने–चुने विश्वविद्यालयों के प्रति आकर्षण कम हो और अधिक से अधिक छात्रों को योग्यता के मानक पर खरा उतारा जा सके। प्रशासनिक अंकुश को कमतर किया जाय तथा पारदर्शिता पर विशेष बल दिया जाय। निर्णय लेने की प्रक्रिया को विकेन्द्रित करने की आवश्यकता है

जिससे कम से कम प्रत्येक विषय के विभागाध्यक्ष, प्राचार्य या कुलपति अपने स्तर पर आवश्यकतानुसार निर्णय लेकर कमियों को दूर कर सकें। प्रवेश प्रक्रिया, परीक्षा प्रक्रिया या छात्र/छात्रों के मूल्यांकन की प्रक्रिया इत्यादि में भी गुणात्मक सुधार किये जाने की आवश्यकता है।

इस प्रकार भारत में शिक्षा के क्षेत्र में प्राइमरी से लेकर डिग्री एवं शोध स्तर तक विभिन्न स्तरों पर बहुत सारी खामियाँ हैं। यह भारतीय शिक्षा के लिए चुनौती बनी हुयी है। समय रहते इस पर ध्यान देने की आवश्यकता है जिससे भारतीय शिक्षा को वैश्विक स्तर पर स्थापित किया जा सके। साथ ही शिक्षा का स्वरुप इस प्रकार का हो कि भारत के लोकतांत्रिक स्वरुप को और सशक्त बना सके और एक समतामूलक एवं न्यायपूर्ण समाज की स्थापना हो सके।

सन्दर्भ ग्रंथ

1. जिज्ञासु, जयन्त (2014), भारतीय उच्च शिक्षा की चुनौतियाँः अनछुआ कोना, नवभारत टाइम्स, www.indiatimes.com
2. ओझा, एन0 एन0 (2005), शिक्षा, भारत की सामाजिक समस्याएं, क्रानिकल बुक्स, नयी दिल्ली, पृष्ठ 258।
3. Sahani, Urvashi (2015), Primary education in India: progress and challenges, www.brookings.edu
4. राजपूत, जगमोहन (2014), कागजों तक सिमटा शिक्षा का अधिकार, राष्ट्रीय सहारा, 21 अप्रैल, 2014, पृष्ठ 10.
5. वेहर, अनुराग (2013), सरकारी शिक्षा मुरझायी तो विफलता तय है, हिन्दुस्तान, 30 दिसम्बर, 2013 पृष्ठ 12.
6. उपरोक्त
7. Singh, J. D. (2012), Higher education in India: issues challenges and suggestions, www.gvctesanga.org
8. Sinha, Kounteya (2015), In a first, two Indian institute make it to world's top 200, 15 Sep. 2015, www.timesofindia.indiatimes.com
9. फजल, रेहान (2013), भारतीय उच्च शिक्षाः 10 तथ्य सैकड़ों सवाल, 22 अक्टूबर, 2013, www.bbc.com
10. उपरोक्त।